SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

NÙkhlx<h ykdxhrkas es oÆ.kr L=h dk fofHkUu :i

lxhrk 'kek] शोधार्थी, हिंदी विभाग
अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
lxhrk 'kek] शोधार्थी, हिंदी विभाग
अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय,
बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 23/01/2023
Revised on : -----
Accepted on : 30/01/2023
Plagiarism : 00% on 23/01/2023

Plagiarism Checker X - Report
Originality Assessment
Overall Similarity: 0%
Date: Jan 23, 2023
Statistics: 0 words Plagiarized / 2218 Total words
Remarks: No similarity found, your document looks healthy.

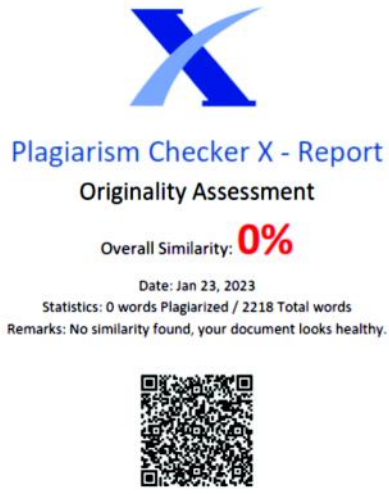

'kks/k lkj

लोकगीत मानव संस्कृति की वह अमूल्य धरोहर है जिनकी पंक्तियों में मानव सभ्यता की कहानियां भरी पड़ी है। लोकगीत किसी भी समाज के सुख–दुख, रहन–सहन, रीति रिवाज, परम्परा, हास–विलास आदि का सच्चा चित्र प्रस्तुत करते है। लोकगीत जनजीवन का उल्लास और उच्छ्वास है,यह आदिम युग से चली आ रही है, यह भाषागत नही भावगत होते हैं। छत्तीसगढ़ लोक गीतों नारी के सम्पूर्ण जीवन के चित्र दिखाई देते हैं, हर गीत भावों से भरा हुआ है। नारी–अंतर्मन का सम्पूर्ण भाव लोक छत्तीसगढ़ी लोक गीतों में साकार हुआ है। नारी समुदाय के द्वारा गाये जाने वाले इन लोक गीतों में शाश्वत रूप से प्रवाहित परम्पराओं का निर्वहन करने वाली नारी जीवन का ज्वलन्त बिम्ब प्रतिबिम्बित हुआ है।

eq[; 'kCn

ykdxhr] ukjh vr¡eu] ijEijk-

लोकगीत जीवन रूपी नदी में बहते हुए उस कंकड़ के सामान है जिसने सदियों के आघातों को सहकर विभिन्न परिस्थियों में भिन्न भिन्न आकार ग्रहण किया है, जिन पर लोकमानस की छाप स्पष्ट परिलक्षित होती है। लोकगीत दो शब्दों में योग से बना है, 'लोक'तथा 'गीत'। लोक शब्द अत्यंत प्राचीन है। ऋग्वेद में भी सामान्य जनता के लिए लोक शब्द का प्रयोग किया गया है।

''डॉ हरदेवबाहरी'' के अनुसार,'' लोक का अर्थ संसार, प्रजा या लोक होता है।''

गीत शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की ''गै'' धातु से हुई है।

''हिन्दी शब्दकोष'' में गीत का अर्थ ''गाया हुआ''

अथवा छोटी पदयात्मक रचना दिया गया हैं।''

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकगीत को लोक साहित्य की आत्मा बताया है।

डॉ. हनुमंत नायडू'' के अनुसार– ''लोकगीत स्वरमाधुर्य से युक्त एक अधर से दूसरे अधर पर थिरकने वाली लोक हृदय की वह सहज अभिव्यक्ति है जिसमें जीवन और संस्कृति की सम्पूर्ण व्याख्या परम्परा एवं इतिहास का हाथ पकड़ कर चलती है।''

मानव के हृदय से झंकृत होने वाली वह समस्त भावनाएं गीत हैं जो भीतर से बाहर झरते रहता है और हर मन को हरते रहता है। ये लोक गीत लिपिबद्ध हो या न हो ये भावनाओं की कंठ ध्वनि होते हैं। हर राष्ट्र के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अपनी बोलियों में लोकगीत होते हैं।

भारत के हृदय मध्यप्रदेश के पूर्वी भाग में अवस्थित धान का कटोरा कहलाता राज्य छत्तीसगढ़ प्राचीन काल से अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान रखता है। छत्तीसगढ़ी लोक गीतो की जो अतुल संम्पदा और अन्नत भण्डार है, वह शाश्वत है। इन गीतों मे संस्कृति की आकृति होती है और संस्कार भी उपहार स्वरूप मिल जाता है। छत्तीसगढ़ी लोकगीतों मे छत्तीसगढ़ी मनोभावों का अंकन मिलता है।

लोकगीत मुख्यतः स्त्रियों के कोमल कण्ठ में बसे होते हैं। घर के काम करते हुए जीवन से सम्बधित अनुभवों को गेय अभिव्यक्ति दे कर सुरक्षित रखा है। लोकगीत स्त्री के जीवन का अटूट हिस्सा है। स्त्री जिस समाज का हिस्सा है, उसकी जीवन–यापन प्रणाली का स्त्री जीवन पर प्रभाव पड़ता है और इसी जीवन–यापन प्रणाली से समाज में एक आदर्श बिम्ब का निर्माण होता है। मानव मन की संवेदना जन्म जात होती है पुरूषों की तुलना नारी अधिक सवेंदनशील होती है। उसका हृदय प्रकृति प्रदत्त कोमल भावनाओं का भण्डार होता है। मातृ रूप में नारी सर्वत्र एवं महान है। नारी ही नर को उत्पन्न करती है उसने ही 'ध्रुव' और 'प्रहलाद' के समान महान पुरूष रत्न को जन्म दिया है इसलिए लिए नारी की निंदा नहीं की जानी चाहिएः

''नारी निदां झन कर दाऊ, नारि नर के खान रे।
नारी नर उपजावै भइया धुरू पहलाद समान रे।''

रावण जैसे विद्वान एवं शक्तिशाली नरेश का विनाश नारी के कारण ही हुआः

"ए ही औरत के कारण लंका के होइस विनास।
रावन अइसन के गरब टूट गए,
तोला मोला कौन पूछे आज।''

छत्तीसगढ़ी लोकगीतो नारी के संबंध में सामान्य विचारों में यह माना जाता है कि नारी को समझना कठिन है। त्रिया चरित्र को भगवान भी नही समझ सकतेः

''आगू डौकी मन धोखा देथें पाछू बताथें बात,
डौकी के जात भवानी रे बाबू,
डौकी के बात भगवान नी पाये पार।
डौकी बात मा झन चला तलवार,
तिरिया चरित मां डूब जाही संसार।''

पहले स्त्रियां धोखा देती हैं फिर सत्य बताती हैं, स्त्री जाति की बात को भगवान भी नहीं जान सकते। स्त्री की बातों में आकर तलवार मत चलाओ त्रिया चरित्र में संसार का भी सर्वनाश हो सकता है।

परायी स्त्री को देखना सामाजिक रूप से अच्छी बात नहीं मानी जाती हैः

''चेरिया बनाइस, जुठई बनाइस, लेलिस मोर मरजाद।''

क्योंकि परायी स्त्री की ओर बुरी नजर से देखने वाला कभी नहीं बच सकताः

''रूख चढ़ैया नी बाचे अऊ पानी के तैराक
पर के औरत ला के दिन ताकबे,
काल छुअै दिन रात।''

गांव सार्वजनिक स्नान प्रणाली होती है, स्त्रियों की अपनी मर्यादा होती है। इसे देखते हुए गांवों के तालाबों में स्त्री पुरूष के अलग–अलग स्नानघाट बनाये जाते हैः

''डौका घाट अंते बने है, गंगा जमुना के धार।
डौकी के अंते बने हैं छीता जामुन के झार।''

छत्तीसगढ़ में सामान्यतः पर्दे प्रथा का अभाव है यद्यपि गुजरी अहिरीन की गाथा में कुछ वर्गों जैसे कि राजपूत, भाट, बैरागी तथा ब्राहमण जाति में पर्दे प्रथा का उल्लेख है।

''मैं रजपूतिन भाट, बेरागिन लोग, बम्हनिन रहितेंव
ममी परदा मा रहितेंव,
अलिन गलिन के दूध बेचैया मे अहिरिन के जात
मैं कै दिन रहूं लुकाय।''

छत्तीसगढ़ सामाजिक जीवन में स्त्री पूर्ण रूप से पुरूष पर आश्रित नही है। वह हर कार्य में पति को सहयोग देती है अतः घर की आय में उसका भी योगदान होता है। वह आर्थिक रूप से भी पति पर पूर्ण रूप से आश्रित नहीं होती है। विशेष परिस्थितियों में वह श्रम करके जीवन–यापन कर सकती हैः

''बनी भूती मां लेतेंव, बनी भूती मां पोस लेतेंव।
बेटा मदनसिंग ला, बाबू मदनसिंग ला,
बनी भूती मां पोस लेतेंव।''

छत्तीसगढ़ की स्त्रियां स्वभावतः निडर भी होती हैः

"में गहिरिन हौं गढ़ बांधव के
मरदन के लागों में तो बाप,
अकड़ तकड़ मोला मिरजा बताही,
खेल मोलही के मार।''

यहां निडरता का अर्थ स्वच्छंता नही है, पति का दर्जा फिर भी ऊँचा है। यहां पति को जवाब देना उचित नही समझा जाता है।

''काबर नोनी डौका संग तेंहर देइस जुआव।''

सामाजिक रूप से नारी की मर्यादा और महानता स्वीकार करते हुए भी यहां पुत्री के जन्म पर वह उत्साह दिखलाई नहीं पड़ता जो पुत्र जन्म पर होता है। पितृसत्तात्मक समाज में पुत्र की ही इच्छा की जाती है क्योंकि वह कुल का रक्षक होता है।

''चौथा महीना जब लागिस सास पुलकाइस,
होही कुल रखबार मोतीयन लुटइहों हों।''

परन्तु अन्य प्रदेशों की भांति नारी के जन्म को हीन दृष्टि से नहीं देखा जाता है और न ही उसे भार माना जाता है। यहां बाल विवाह प्रथा होने के कारण दहेज प्रथा अन्य राज्यों की भांति कठिन नहीं है। छत्तीसगढ़ में ''बाल विवाह'' प्रथा प्रचलित हैः

"नान्हें मां करेंव तोर अंगनी मंगनी,

नान्हें में करेंव बियाह।''

परन्तु अपनी इच्छा से पति चुनने का उल्लेख लोकगीतों में मिलता है। वीरसिंह की गाथा में "जोरन'' तथा "जीवन" मदनसिंह से स्वयं विवाह करने की इच्छा व्यक्त करती है।

(1) ''दादा कर कइना चिठ्ठी देवन लागे
एहि परदेसी संग भांवर पारि देबे।''

(2) "जितन कइना ओला अपन घर लेगे
दूसर दिन होगे बिहाव के तैयारी।''

बाल विवाह के दोषों को काफी सीमा तक नारी को ''चूरी पहरई'' में पुर्नविवाह तथा विधवा विवाह का अधिकार देकर दूर करने का प्रयत्न किया गया है। विवाहित पुत्री को पतिगृह न भेजना पाप समझा जाता है। विदाई के लिए आये डोले को खाली भेजने से कन्या के पिता को सौ कपिला गायों के वध तुल्य पाप लगता है।

"अमली सेले आमा सेले, सेले बाल बबूल।
पर घर के बेटी ला सेबो, न मिले पाप के मूल।
मोरो धरम ला छूटन दे बेटी, डहर मा लेबे बनाय
आयो डोला जुच्छा फिरा हूं,
सौ कपिला के लागे मोला पाप।"

विदाई शब्द ही दुखदाई होता है। विवाह के पश्चात् माता–पिता से बिछड़कर पतिगृह जाती हुई नारी के आंसुओं से छत्तीसगढ़ी लोकगीत भीगे हुए हैं:

''बेटा रहितेंव तोर घर मां रहितेंव
बेटी भयेंव बिरान ओ दाई।''

विवाह के पश्चात् नारी एक नये परिवेश एक नये परिवार में पहुंचती है जहां उसे केवल पति के प्रेम का सहारा होता है। जब नवविवाहिता को पति का प्रेम प्राप्त होता है तो सास ननद के मन में उसके लिए ईर्ष्या का भाव उत्पन्न होता है जो उसके लिए कई कष्टों के रूप में प्रकट होता है:

''सास मोर मारेय, ननद गारी देवय
राजा मोर गइरन बिदेस
लहुरा देवर मोर जनम के बैरी,
लेइ जावे तिरिया संदेस।''

विवाह के पश्चात् नारी की सबसे बड़ी अभिलाषा होती है–मातृत्व की। मातृत्व से वंचित स्त्रीयां बांझ कहलाती है। नारी का बांझ या बंध्या होना यहां भी अभिशाप माना जाता है।

''घर कहे बंझुली बाहिर कहै बंझुली
बंझुली के मन हे उदास।''

समाज में नारी जीवन की सार्थकता पुत्रवती होने में ही मानी जाती है:

'तिरिया के जन्में कवन फल हे मोरे साहब,
दुनिया अनन्द जब होही तभे फल होही।''

पुत्र का जन्म न होने पर पति के दूसरे विवाह की परम्परा छत्तीसगढ़ में भी प्रचलित है:

''ना हम बारे कन्या ना हम भोरे,
न हम कंच कुंवारे,

तुम्हर कोखे में पूत नइये,
रचत हवौं दूसरे बिहाव।''

पति का मन चाहा कार्य नहीं करने पर पति द्वारा दूसरा ब्याह किया जाता हैः

''मधुपीपर नई पीबे,
तो दूसर करिहवं बिहाव
ओही हा, पीही मधु पीपर हो।''

जब व्यक्ति परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने में असमर्थ तथा असक्षम होता है तो उसे ईश्वर की शरण में जाने के अलावा उसे कोई दूसरा मार्ग नहीं दिखता है। नारी भी अपनी इस दुःस्थिति के निवारण के लिए गौरा माता से अन्न–धन तथा पुत्र देने की कामना के साथ सौत न देने की कामना करती हैः

''अन्ने दीही धने दीही, दीहा गौरा पूत हो,
एक रून दीहा गौरा, सवती सोहाग हो,
सवती के बोल गौरा सहा नही जाय हों।''

स़्त्री ससुराल में सारे कष्टों को सह सकती है परन्तु पति का विरह उसे असहनीय होता है। बिना वृक्ष का आंगन तथा बिना मुर्गे का गांव जिस तरह सुना होता है उसी भांति बिना पति के नारी का जीवन सूना होता हैः

''बिना बिरीछ के अंगना, बिन कुकरा के गांव,
बिन डौका के डौकी रोइ रोइ करत हे बिहान।''

पति के बिना पत्नि को अपना जीवन ही व्यर्थ लगने लगता हैः

''पिया बिन कइसे के राखंव तनला,
गुनगुन सुवना बताव।''

पति के विरह में वह पानी से भी पतली हो जाती हैः

"मैं दुख दूबर पानी ले पातर कि ठेवना देथे मोर सास।''

स्त्रियां पतिवत्रा होती है, वह अन्य पुरूषों की ओर देखना भी पाप समझती हैः

''में मरगें मोर धरम करम मां,
दूसर के पति ला नई झाकवं ओ।''

पति–पत्नि का साथ उनकी मृत्यु के बाद ही छूटेगाः

''अमली के लकड़ी काटे मां कटही,
तोर मोर पिरित मरे मां छूटही।''

पुर्नविवाह का अधिकार पाकर भी यहां की नारी एक ही विवाह पर विश्वास करती है। उसकी दृष्टि में विवाह पूरे जन्म का सौदा है। वह कोई घरौंदा नहीं जिसे जब चाहे तोड़कर दूसरा बना लिया जायेः

''एक जनम के होगे सौदा, दूसर कइसे होही गा
ए नो हे घर घुदिंया, मेटि–मेटि खेलोंगा।''

स्त्री चारित्रिक शुद्धता पर बल देती है, यहां उनका सबसे बड़ा आभूषण उनका चरित्र हैः

''कुआं बुड़ि जायेतेंव बावली धंसी मरितेव गा,
फेर कुकरमी होइके, झन रोवतेंव गा।''

समाज द्वारा प्रदत्त सारे सामाजिक अधिकारों के होने पर भी नारी के हृदय में एक बात शूल की तरह चुभती है कि भाई को केवल पुत्र होने के कारण रंग महल मिल गया लेकिन उसे एक पुत्री होने के कारण विदेश में ब्याह

दिया गया हैः

''भाइ ला देहे रंग महला दुमंजला रे सुअना,
हमला तो देहे बिदेस।''

बेटी की स्थिति तो एक गाय के समान है जिसकी रस्सी जो चाहे पकड़ कर ले जाता हैः

''पइंया परत हो चंदा सुरूज के, रे सुअना
तिरिया जनम झन देय
तिरिया जनम मोर गऊ के बरोबर,
जहं पठवई तहं जाये।''

नारी का जीवन उसका विवाह और उसके पश्चात् मिलने वाले ससुराल के दुख उसकी इस धारणा और भी बलवती करते हैं कि सिद्धांत रूप में समाज जो चाहे कुछ भी कहे, परन्तु यथार्थ में व्यवहार में नारी पुरूष की तुलना में कुछ भी नहीं है।

इस समाज में भले ही स्त्रियों हो हीन दृष्टि से देखा जाता पर लोक में प्रचलित नारी की दोयम स्थिति यहां भी कायम है। इन गीतों में एक नारी के जीवन के सभी पक्षों का वर्णन किया जाता है। एक पुत्री, बहन, पत्नी, बहू, भाभी, मां सभी रूपों में नारी ने अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया है। सामाजिक रूप से ही नही बल्कि आर्थिक रूप से भी वह पति की संगिनी है।

fu"d"kl

छत्तीसगढ़ अपने मानव समाज के साथ अपने गीतों को भी संजोए है। लोकगीतों की आवाज कानों मे पड़ते ही लोगों के बुझे हुए चेहरे खिल उठते हैं और आंखों में दिव्य ज्योति छा जाती है। धीरे–धीरे ये लोकगीत लुप्त हो रहें है और साथ ही लुप्त हो रही छत्तीसगढ़ी नारीयों की दृढ़ इच्छा शक्ति एवं संस्कारित मन। आज आवश्यकता है इन गीतों के साथ– साथ नारी के मान सम्मान एवं उनके समाज में स्थान को संजोने की और समाज में उन्हें वास्तविक स्थान दिलाने की।

lUnHkZ lwph

1. अग्रवाल अनूसइया, (2009) हिन्दी *लोक साहित्य शास्त्रः सिद्धांत और विकास,* नीरज बुक सेंटर।
2. दुबे श्यामाचरण, (2001) *छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का परिचय,* भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली।
3. कसार जमुना प्रसाद, छत्तीसगढ़ी गीत।
4. पाण्डेय, मुकुटधर, *छत्तीसगढ़ का लोक जीवन*।
5. शुक्ल जयश्री एवं चतुर्वेदी श्रीमती राजेश, (2014) *लोक साहित्य की प्रासंगिकता,* भावना प्रकाशन,दिल्ली।
6. साहू बिहारी लाल, *छत्तीसगढ़ी भाषा और लोक साहित्य,* भावना प्रकाशन, नई दिल्ली–91।
7. नायडू हनुमंत, (1993) *छत्तीसगढ़ लोक गीत,* विश्वभारती प्रकाशन,नागपुर।
8. वर्मा शकुंतला (1971) *छत्तीसगढ़ लोक जीवन और लोक साहित्य का अध्ययन,* रचना प्रकाशन, इलाहाबाद उ.प्र.।

****